SHODHASAMHITA
शोधसंहिता
ISSN 2277-7067
UGC CARE Group 1

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संचेतना : विश्लेष्णात्मक अध्ययन

डॉ. गिरधारी लाल शर्मा

डॉ. विष्णु कुमार
सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं–341306 (राजस्थान)

सारांश–विश्व की प्राचीनतम भारतीय सनातन संस्कृति में पर्यावरण को देवतुल्य स्थान दिया गया है। वैदिक विचारधारा के अनुसार मानव के लिए सम्पूर्ण सृष्टि ही पर्यावरण है। सृष्टि के प्रत्येक उपादान की रचना आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी तत्त्वों के योग से हुई है। आज पर्यावरण की जो भी स्थिति है, वह आदिकाल से चली आ रही मनुष्य व पर्यावरण के बीच अन्तक्रिया का ही परिणाम है।आज न तो पीने को स्वच्छ पानी है, ना ही श्वास लेने को शुद्ध हवा और न ही खाने को परिशुद्ध आहार। कृषि योग्य भूमि निरन्तर बंजर होती जा रही है, वन तथा वन्य जीव निरन्तर घट रहे हैं; जिसके कारण आज पृथ्वी पर जीवन संकट उत्पन्न होता जा रहा है।यही कारण है कि आज पर्यावरण संरक्षण विश्व के समक्ष सबसे गंभीर चुनौती है तथा पूरी दुनिया का ध्यान इस ओर है। दुनिया को यदि इस संकट से बचना है तो प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को जानना, समझना तथा अंगीकार करना सर्वोत्कृष्ट समाधान हो सकता है।प्रस्तुत शोध आलेख में पर्यावरण के चार प्रमुख घटकों– जल, वायु, वन तथा वन्य जीव एवं पृथ्वी के संरक्षण की भारतीय संस्कृति में संचेतना का उल्लेख किया गया है।

मुख्य विषय वस्तु :

भारतीय संस्कृति व्यक्ति, समाज, राष्ट्र के जीवन का सिंचन कर उसे पल्लवित, पुष्पित, फलयुक्त बनानेवाली अमृत स्रोतस्विनी चिरप्रवाहिता सरिता है। यह विश्व भी सर्वाधिक प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृति है। अन्य संस्कृतियां तो समय की धारा के साथ नष्ट होती रही किन्तु भारत की संस्कृति अनादिकाल से ही अपने परम्परागत अस्तित्व के साथ अजर–अमर बनी हुई है।

विश्व की प्राचीनतम भारतीय सनातन संस्कृति में पर्यावरण को देवतुल्य स्थान दिया गया है। यही कारण है कि पर्यावरण के सभी अंगों जैसे–जल, वायु, भूमि आदि को देवताओं से जोड़ा गया है। यह इतना उच्च भाव है जिसमें पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने की कल्पना तक नहीं की जा सकती है।

वैदिक विचारधारा के अनुसार मानव के लिए सम्पूर्ण सृष्टि ही पर्यावरण है। सृष्टि के प्रत्येक उपादान की रचना आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी तत्त्वों के योग से हुई है। ये तत्त्व सृष्टि के शोधन व रक्षण का कार्य करते हैं अतः ऋषियों ने इनमें देवत्व के दर्शन किये।

सृष्टि में मानव अनृत रूप है– सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्याः। मानव अनृत आचरण कर सृष्टि की गतिशील नियमबद्ध व्यवस्था में गतिरोध उत्पन्न कर पाप करता है और पर्यावरण संकट का कारण बन जाता है। आज के इस तीव्र परिवर्तनशील विश्व में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व चर्चित शब्द 'पर्यावरण बन चुका है। आज पर्यावरण की जो भी स्थिति है, वह आदिकाल से चली आ रही मनुष्य व पर्यावरण के बीच अन्तक्रिया का ही परिणाम है।

मनुष्य ने विगत शताब्दियों में आर्थिक, औद्योगिक एवं भौतिक तथा तकनीकी के प्रत्येक पक्षों की उन्नति के लिए स्वहित में तो अधिक प्रयास किये परन्तु इन सब में वह पर्यावरण को विस्मृत करता चला गया। परिणामस्वरूप विकास की कीमत मनुष्य ने पर्यावरण सम्बन्धी वृहद समस्याएं उत्पन्न कर चुकायी है। तकनीकी प्रगति में मानव इतना व्यस्त हो गया कि उसे पता ही नहीं चला कि हमारी पर्यावरण समस्याओं ने कब उग्र रूप धारण कर लिया। पारिस्थितिकी संतुलन पूर्णतया गड़बड़ा गया है। आज न तो पीने को स्वच्छ पानी है, ना ही श्वास लेने को शुद्ध हवा और न ही खाने को परिशुद्ध आहार। कृषि योग्य भूमि निरन्तर बंजर होती जा रही है, वन तथा वन्य जीव निरन्तर घट रहे हैं; जिसके कारण आज पृथ्वी पर जीवन संकट उत्पन्न होता जा रहा है। इसके लिए कोई और नहीं हम स्वयं जिम्मेदार हैं। हमारी तुच्छ स्वार्थ प्रवृत्ति जिम्मेदार है। अगर हम भौतिकता के पीछे इसी तरह अंधी दौड़ लगाते रहें, तो वो दिन दूर नहीं जब पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा। यही कारण है कि आज पर्यावरण संरक्षण विश्व के समक्ष सबसे गंभीर चुनौती है तथा पूरी दुनिया का ध्यान इस ओर है। दुनिया को यदि इस संकट से बचना है तो प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को जानना, समझना तथा अंगीकार करना सर्वोत्कृष्ट समाधान हो सकता है।

प्रस्तुत शोध आलेख में पर्यावरण के चार प्रमुख घटकों– जल, वायु, वन तथा वन्य जीव एवं पृथ्वी के संरक्षण की भारतीय संस्कृति में संचेतना का उल्लेख किया गया है।

भारतीय संस्कृति में वायु संरक्षण के प्रति संचेतना

शुद्ध प्राणवायु का सेवन करना सबका जन्मसिद्ध अधिकार है किन्तु वर्तमान में वायु प्रदूषण की जो स्थिति है, शुद्ध वायु मिलना सिर्फ एक सपना बन कर रह गया है। दुनियां के सबसे ज्यादा प्रदूषित शहर हमारे देश में है, दिल्ली इसका जीवन्त उदाहरण है। अतः वायु संरक्षण पृथ्वी पर जीवन बनाये रखने हेतु सर्वोच्च आवश्यकता है।

भारतीय संस्कृति में इस दिशा में विशद चिन्तन मिलता है। वैदिक कालीन ऋषि इस तथ्य से परिचित थे। वायु में प्राणदायक तत्त्व (ऑक्सीजन) है, अतः वायु को प्रदूषित होने से रोकना अत्यन्त आवश्यक है। ऋग्वेद में वायु को अमृत का खजाना तथा जीवनदायक कहकर प्रार्थना की गई है।

यादतो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हितः। तेन देहि जीवसे।

(ऋग्वेद 10.186.3)

अतः ऋग्वेद का निर्देश है कि हम ऐसा कोई काम न करें जिससे वायु का अमृतत्व बर्बाद हो।

नू चिन्नु वायोरमृतं वि दस्येत्।

(ऋग्वेद 6.37.3)

वेद विशेषज्ञ यह मानते हैं कि वेदों में ओजोन परत तथा उसके महत्त्व की ओर पर्याप्त संकेत मिलता है। डॉ. कपिल देव द्विवेदी के अनुसार, ऋग्वेद में ओजोन परत के लिए 'महत् उल्ब' प्रयुक्त हुआ है। उसे 'स्थिविर' अर्थात् मोटी परत कहा गया है जो पृथ्वी की रक्षा करती है–

महत् तदुल्बं स्थिविरं तदासीद् येनाविष्टितः प्रविवेशियापः।

(ऋग्वेद 10.51.1)

'उल्ब' शब्द का प्रयोग गर्भस्थ शिशु के ऊपर ढकी झिल्ली के लिए होता है। इसका अर्थ है कि इस परत को नुकसान पहुंचाना उसी तरह विनाशकारी होगा जैसा कि गर्भस्थ शिशु की झिल्ली से छेड़छाड़ करना और आज हम इसका प्रत्यक्षतः अनुभव कर भी रहे हैं।

भारतीय संस्कृति में जल संरक्षण के प्रति संचेतना

पृथ्वी पर जीवन के लिए जल एक मूलभूत आवश्यकता है किन्तु अपनी अतिमहत्वाकांक्षी प्रवृत्ति तथा स्वार्थवृत्ति हेतु मनुष्य ने शुद्ध जल स्रोतों को इतना प्रदूषित कर दिया है कि जलीय जीव–जन्तु मरने लगे हैं, भूमि का उपजाऊपन कम हो रहा है, मनुष्य तथा अन्य जीवों में अनेक गंभीर बीमारियों का कारण प्रदूषित जल का सेवन है। अत्यधिक जल दोहन के कारण भूजलस्तर निरन्तर घटता जा रहा है, जो कि गंभीर चिंतनीय विषय है। यदि हम आने वाली पीढ़ियों को शुद्ध जल स्रोत छोड़कर जाना चाहते हैं तो हमें जल संरक्षण के प्रति अत्यधिक सचेत होना होगा।

भारतीय संस्कृति में तो प्राचीन काल से ही जल संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया है। जल के प्रमुख स्रोत नदियों को 'माता' का स्थान देकर उनकी पूजा की जाती है। जहां दो नदियों का संगम होता है उस स्थान को प्रयाग कहकर हम पूजते हैं। किसी भी धार्मिक अनुष्ठान की सफलता के लिए कलश में सात नदियों के जल को आवश्यक माना गया है और उनसे प्रार्थना की जाती है कि–

गंगे! च जमुने! चैव गोदावरी! सरस्वती!
नर्मदे! सिंधु! कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरू।।

गंगा नदी का विशेष महत्त्व रहा है क्योंकि इसका स्थान भगवान शिव की जटाओं में माना गया है तथा पितरों की मोक्षकामना हेतु गंगा स्थान का विशेष महत्त्व माना जाता है। ऋषिगण नदी प्रदूषण की आशंका से अनभिज्ञ नहीं थे। अतः ऋग्वेद में प्रदूषण मुक्त नदियों की कामना की गई है–

भन्नदीषु ... परि जायते विषम् विश्वे देवा निरितस्तत् सुवन्तु।

(ऋग्, 7.50.4)

सर्व नद्यो अशिमिदा भवन्तु।

(ऋग्., 7.50.4)

जिस संस्कृति में जल स्रोतों के संरक्षण हेतु इतने उच्च प्रतिमान रहे हैं, आज हम आधुनिकता की अंधी दौड़ में उनको भूलकर अपने ही जीवन को नष्ट करने की ओर अग्रसर हो रहे हैं। यदि अभी भी हम अपने प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों का अनुसरण प्रारम्भ करें तो जल संरक्षण कर सकते हैं।

भारतीय संस्कृति में भूमि–संरक्षण के प्रति संचेतना

पर्यावरण का सबसे प्रमुख भाग पृथ्वी है, जो विभिन्न पर्यावरणीय घटकों का आश्रय स्थल है। सभी जीव–जन्तुओं तथा पेड़–पौधों का अस्तित्व पृथ्वी से ही है। यह शांतिदायिनी, सुगन्धिनी, सुखदायिनी, अमृतदायी पदार्थों वाली, दुग्दाधि पदार्थों वाली है। यह विश्वम्भरा, धन की खान, प्रतिष्ठा, हिरण्यवक्षा तथा जगत को अपने ऊपर बसाने वाली है। किन्तु मनुष्य ने निरन्तर भौतिकता की अंधी दौड़ में पृथ्वी का किसी न किसी प्रकार अत्यधिक दोहन किया है। अधिक उपज प्राप्ति की होड़ में अत्यधिक रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों के प्रयोग से उपजाऊ भूमि बजर होती जा रही है। अत्यधिक खनन से भूगर्भ खोखला होता जा रहा है, सड़क पुल, नई कॉलोनियां बनने से कृषि भूमि निरन्तर कम होती जा रही है जिसके गंभीर परिणाम सामने आने लगे हैं। भूमि प्रदूक्षण बढ़ने से जल व वायु प्रदूषण भी बढ़ रहा है। अतः आज भूमि संरक्षण की महती आवश्यकता है।

भारतीय संस्कृति में भूमि संरक्षण पर विस्तृत विवेचना की गई है। वेदों में पर्यावरण के अग्रगण्य घटक के रूप में पृथ्वी को माता के रूप में स्वीकार किया गया है। अथर्ववेद में स्पष्ट कहा गया है कि भूमि हमारी माता है और हम पृथ्वी की संतान हैं–

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।

(अथर्ववेद, 12.1.12)

भूमि में प्राण, रक्त व आत्मा का होना माना गया है– भूम्यां असुरसृगात्मा क्वस्वित्। इस प्रकार पृथ्वी मानव सदृश्य है, उसे हिंसित, पीड़ित या प्रदूषित करना भारी अपराध है। यजुर्वेद में निर्देश दिया गया है–

पृथ्वी मातर्मा मा हिंसीः मो अहं त्वाम्।

(यजुर्वेद, 10.23)

अथर्ववेद में हिरण्यवक्षा भूमि को प्रणाम करके उसका अत्यधिक दोहन न करने का संकेत है–

शिला भूमिरश्मा पांसुः सा भूमि संधृता धृता।
तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरं नयः।।

भारतीय सनातन संस्कृति में इतना उच्च आदर्श विद्यमान है कि प्रातः पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व पृथ्वी माता से क्षमा–याचना की जाती है–

समुद्र वसने देवी, पर्वत स्तन मण्डले।
विष्णुपत्नीं नमस्तुभ्यं पादस्पर्शम् क्षमस्वमे।।

जहां आदर, पूजा का भाव तथा माता का दर्जा हो वहां दोहन या नुकसान पहुंचाने का भाव आ ही नहीं सकता। आज हमें भूमि संरक्षण हेतु भारतीय संस्कृति के इन्हीं आदर्शों पर लौटने की आवश्यकता है।

भारतीय संस्कृति में वनस्पति तथा वन्य जीवों के संरक्षण के प्रति संचेतना

पेड़–पौधे तथा वन मनुष्य के जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं, जिनका उपयोग वह आदिकाल से अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करता आ रहा है, किन्तु साथ ही पहले उसी अनुपात में वृक्षारोपण भी किया जाता था। फलस्वरूप पर्यावरण को उतनी क्षति नहीं होती थी किन्तु पिछले कुछ वर्षों से तीव्र जनसंख्या विस्फोट के कारण पेड़–पौधों की अंधाधुंध कटाई की जा रही है, वन क्षेत्र निरन्तर घटता जा रहा है जिससे विभिन्न पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो रही है जिनमें से बढ़ता वायु प्रदूषण भी एक है, क्योंकि पौधे वायु को शुद्ध करने का कार्य करते हैं, प्राकृतिक औषधीय पादप विलुप्त होते जा रहे हैं, इसलिए एलोपैथिक दवाइयों का उपयोग बढ़ रहा है, जो एक बीमारी को ठीक करके दूसरी बीमारी पैदा कर रही है। वन्य जीवों के प्राकृतिक आवास नष्ट हो रहे हैं जिससे उनके जीवन पर संकट आ गया है। इन सबका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव मावन जीवन पर पड़ रहा है जो कि गंभीर चिन्तनीय विषय है।

भारतीय संस्कृति मूलतः अरण्यक (वन) संस्कृति रही है। वनस्पति संरक्षण के लिए पौधों को देवी–देवताओं से सम्बन्धित किया गया है। 'तुलसी' को भगवान विष्णु, राम, कृष्ण, लक्ष्मी तथा जगन्नाथ से जोड़कर महाऔषधि बताया गया है। 'अशोक वृक्ष' को बुध, इन्द्र, आदित्य के रूप में अभिहित किया गया। 'पीपल' को विष्णु, लक्ष्मी, दुर्गा आदि के रूप में मानकर औषधि के रूप में प्रयुक्त किया गया। 'आम' के पत्तों

का पूजा में महत्त्व बताया गया है। इस प्रकार पौधों के संरक्षण का उच्च आदर्श भारतीय संस्कृति में निहित है। यजुर्वेद का निर्देश है कि हम पेड़ पौधों को न काटें और न ही किसी तरह हानि पहुंचाएं–

औषधास्ते मूलं मा हिंसिषम्।

(यजुर्वेद 1.25)

वनस्पति के समान पशु–पक्षी तथा अन्य जीव–जन्तुओं का भी पर्यावरण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान है। वन क्षेत्र के नष्ट होने से वन्य जीवों के प्राकृतिक आवास नष्ट हो रहे हैं जिससे उनके जीवन पर संकट आ गया है। साथ ही वन्य जीवों का अत्यधिक शिकार होने से कई जातियां विलुप्त प्रायः है तथा अनेक विलुप्त हो चुकी हैं, इससे पारिस्थितिकी असंतुलन पैदा हो गया है। अतः पशु–पक्षी तथा वन्य जीवों का संरक्षण भी अत्यन्त आवश्यक है।

भारतीय संस्कृति में पक्षी तथा वन्य जीवों के संरक्षण के लिए उन्हें विभिन्न देवताओं से सम्बन्धित किया गया है। जैसे– नंदी को भगवान शिव, शेर को माँ दुर्गा, मूषक को भगवान गणेश, श्वेत हंस को माँ सरस्वती, मोर को भगवान कार्तिकेय, मगरमच्छ को माँ गंगा, हाथी को इन्द्रदेव, भैसा को यमराज, गरूड़ को भगवान विष्णु के वाहन माना गया है।

हमारे वेदों में 'पशून पाहि' शब्द आता है जिसका अर्थ है पशुओं की रक्षा करो। यजुर्वेदीय रूद्राष्टाध्यायी में उल्लेख है– 'पशुनां पतये नमो', 'त्रियविश्चमेदित्यवाट् च मे षष्टवाट् च मे' अर्थात् भगवान् शंकर पशुओं के भी देवता हैं तथा उनका संरक्षण करते हैं। इस प्रकार वन तथा वन्य जीवों के संरक्षण का वृहद उद्देश्य भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को आचरण में लाने से ही संभव हो सकेगा।

निष्कर्ष :–

भारतीय सनातन संस्कृति की परम्परा स्वभावतया पर्यावरण हितैषी चिन्तन की ओर उन्मुख रही है। इसके अन्तर्गत पर्यावरणीय संरक्षण के विपुल सूत्र व संदर्भ भरे पड़े हैं। पर्यावरण संकट की इस घड़ी में हमारी सनातन परम्परा आध्यात्मिक पुनर्जागृति तथा प्रकृति के साथ जीने की अभिलाषा उत्पन्न करने में समर्थ है। वर्तमान में बाह्य प्रकृति के साथ मनुष्य की अन्तःप्रकृति के स्वाभाविक सामंजस्य पर जोर देने वाला जीवन दर्शन की आवश्यकता है और भारत में इसकी सनातन परम्परा रही है। इस प्रकार पर्यावरणीय चिन्तन की सनातन परम्परा वर्तमान पर्यावरण संकट के युग में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

संदर्भ ग्रंथ

- गोस्वामी, के.डी. (2015), समाज एवं पर्यावरण : चुनौतियां एवं समाधान, नई दिल्ली, रावत प्रकाशन।
- सोजित्रा, विजय एस. (2011), वैदिक संस्कृति एवं पर्यावरण संरक्षण, जयपुर, पैराडाइज पब्लिशर्स।
- पाण्डे, रमाकान्त (2013), पर्यावरण प्रबन्धन, नई दिल्ली, अनुभव पब्लिकेशन।

- मेहता, ओम प्रकाश (2015), भारतीय पर्यावरणीय आचारशास्त्र, दिल्ली, न्यू भारतीय बुक कॉर्पोरेशन।
- व्यास, हरिश्चन्द्र (2006), पर्यावरण : कल, आज और कल, जयपुर, श्याम प्रकाशन।
- ऋग्वेद, चौखम्भा विद्याभवन, दिल्ली
- यजुर्वेद संहिता, सावलेकर स्वाध्याय मण्डली, पारडी
- अथर्ववेद, चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी।
- http://hindi.indiawaterportal.org/environment-protection
- www.essayinhindi.com/environment